

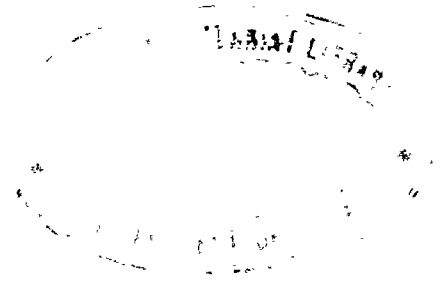


भारत का राजपत्र The Gazette of India

असाधारण
EXTRAORDINARY

भाग III—खण्ड 4
PART III—Section 4

प्राधिकार से प्रकाशित
PUBLISHED BY AUTHORITY



सं. 28]

नई दिल्ली, मंगलवार, मार्च 28, 2000/चैत्र 8, 1922

No. 28]

NEW DELHI, TUESDAY, MARCH 28, 2000/CHAITRA 8, 1922

महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण

अधिसूचना

नई दिल्ली, 28 मार्च, 2000

सं. टीएएमपी/79/99-सीपीटी.—महापत्तन न्यास अधिनियम, 1963 (1963 का 38) की धारा 49 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण एतद्वारा संलग्न आदेशानुसार मैसर्स श्रुति स्टील्स लिमिटेड द्वारा 1994—97 के दौरान जहाज तोड़ने के लिए कलकत्ता पत्तन न्यास द्वारा उनसे वसूल किए गए बर्त किराया प्रभारों के 50 प्रतिशत की वापसी करने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन-पत्र का निपटान करता है।

मामला सं० टीएएमपी/79/99-सीपीटी

मैसर्स श्रुति स्टील्स लिमिटेड

..... आवेदक

बनाम

कलकत्ता पत्तन न्यास (सीपीटी)

..... प्रतिवादी

आदेश

(मार्च, 2000 के 15वें दिन को पारित किया गया)

यह मामला आवेदक-फर्म मैसर्स श्रुति स्टील्स लिमिटेड, कलकत्ता द्वारा 1994—97 के दौरान

जहाज तोड़ने के लिए कलकत्ता पत्तन न्यास (सीपीटी) द्वारा उनसे वसूल किए गए बर्थ किराया प्रभारों के 50 प्रतिशत की वापसी करने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन पत्र से संबंधित है।

2. इस मामले से संबंधित तथ्य नीचे दिए गए हैं:—

2.1 आवेदक—फर्म (मैसर्स श्रुति स्टीलस लिमिटेड) कलकत्ता में जहाज तोड़ने वाली एक फर्म के रूप में पंजीकृत थी। यह अपना व्यवसाय सीपीटी में चला रही थी। यह मामला 1994–97 के दौरान सीपीटी में इस कंपनी द्वारा तोड़े गए 8 जहाजों से विशेषकर संबंधित है। अपनी स्थापित पद्धति के अनुसार इन 8 मामलों में से प्रत्येक मामले में सीपीटी ने जहाज तोड़ने की पूरी अवधि के लिए संबंधित जहाज के प्रमाणित जीआरटी के अनुसार (पूरा) बर्थ किराया वसूल किया है। प्रत्येक मामले में, सीपीटी और आवेदक फर्म के बीच प्रक्रियाओं/दरों के अधिसूचित मान/प्रभारों इत्यादि, इन चर्चाओं के कार्यवृत्तों, कार्यकलाप के स्थान/कार्य की अवधि/वसूल की जानी वाली दरों के बारे में विशिष्ट करार निष्पन्न करने और प्रभारों के ब्योरेवार बिलों के संबंध में विस्तृत—विचार विमर्श हुए थे।

2.2 सीपीटी की स्थापित पद्धति के अनुसार और उपर्युक्त विस्तृत प्रक्रिया के अनुसरण में आवेदक—फर्म 1994–97 के दौरान सीपीटी में जहाज तोड़ने का व्यवसाय करती रही थी। इसकी ओर से अपनाई गई प्रक्रियाओं अथवा उपलब्ध कराई गई सुविधाओं अथवा लागू दरों के बारे में (भी) कोई विरोध नहीं किया गया था। वर्ष 1997 में संदर्भगत आठवें जहाज को तोड़ने के बाद आवेदक—फर्म ने सीपीटी में अपना व्यवसाय स्पष्टतः बंद कर दिया था।

2.3 तत्पश्चात्, जनवरी 99 में आवेदक—फर्म ने बर्थ किराया प्रभार माफ करने और महापत्तन न्यास अधिनियम, 1963 की धारा 54 के अंतर्गत सीपीटी को अनुदेश जारी करने के लिए भूतल परिवहन मंत्रालय से संपर्क किया। भूतल परिवहन मंत्रालय ने यह आवेदन—पत्र निम्नलिखित टिप्पणी के साथ निपटा दिया था:—

“कलकत्ता पत्तन न्यास (सीपीटी) द्वारा बर्थ किराया प्रभार के लिए निर्धारित की गई दरें चूंकि भारत सरकार द्वारा अनुमोदित की गई हैं, इसलिए वे ज्यों की त्यों बनी रहेंगी। तथापि, फर्म मामले को समाधान हेतु महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण (टीएएमपी) को सौंपने के लिए सीपीटी से संपर्क कर सकती है अथवा फर्म टीएएमपी से स्वयं संपर्क कर सकती है।”

2.4 भूतल परिवहन मंत्रालय के इस प्रत्युत्तर से व्यथित होकर आवेदक-फर्म ने कलकत्ता उच्च न्यायालय में इस आधार पर रिट याचिका दाखिल की थी कि महापत्तन न्यास अधिनियम की धारा 54 के अंतर्गत दरों के मान को संशोधित और/अथवा परिवर्तित करने की शक्ति केवल केन्द्रीय सरकार के पास है तथा किसी अन्य प्राधिकरण (महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण सहित) के पास ऐसा करने की शक्ति नहीं है।

2.5 रिट याचिका में भारत संघ सरकार ने मूल आपत्ति यह उठाई थी कि चूंकि याचिकाकर्ता ने महापत्तन प्रशुल्क प्राधिकरण से कोई संपर्क स्थापित नहीं किया था, इसलिए इस रिट याचिका को अधूरी माना जाए।

2.6 भारत संघ सरकार की इस मूल आपत्ति का कलकत्ता उच्च न्यायालय ने समर्थन किया था और उसने इस प्राधिकरण को निर्देश के साथ रिट याचिका का निपटारा किया था कि रिट याचिका को अभ्यावेदन माना जाए और सभी पक्षों को विधिवत सूचना के साथ सुनवाई का अवसर देते हुए एक तर्कसंगत आदेश पारित करके आदेश की सूचना की तारीख से 8 सप्ताह की अवधि के भीतर इसका निपटारा करे।

2.7 कलकत्ता उच्च न्यायालय के निदेशानुसार आवेदक-फर्म के अभ्यावेदन को प्रशुल्क मामले के रूप में पंजीकृत किया गया था। इस पर प्राधिकरण द्वारा निर्धारित प्रक्रियाओं और केवल इससे संबंधित कार्य संचालन विनियमों के अनुसार ही कार्रवाई की गई थी। आवेदक-फर्म ने प्राधिकरण द्वारा (इच्छुक पक्षों/समूहों के साथ) आरंभ की गई विचार-विमर्श की प्रक्रिया पर आपत्ति की थी। आवेदक-फर्म (इसके निदेशक श्री एस.के. जैन के माध्यम से कार्रवाई) इस मामले को केवल उसके और सीपीटी के बीच का विवाद माना जाना चाहती थी। आवेदक-फर्म के इस विचार को इस कारण से स्वीकार नहीं किया गया था कि हमने इसे प्राधिकरण के विनियमों के अनुसार कार्रवाई करने के लिए इस प्राधिकरण के साथ पंजीकृत एक नियमित मामला माना था। हमारे विचार में माननीय उच्च न्यायालय ने इस प्राधिकरण को इस मामले पर उस आपत्ति के संदर्भ में कार्रवाई करने का निर्देश दिया था कि उच्च न्यायालय से संपर्क करने के पूर्व सभी उपलब्ध मंच समाप्त नहीं हो गए थे। तदनुसार, हमने इस मामले को हमारे पास पंजीकृत नियमित मामले के रूप में हाथ में लिया था और पक्षों, प्रक्रियाओं इत्यादि के बारे में किसी विशेष निर्देश सहित उच्च न्यायालय द्वारा प्रस्तुत मामले के रूप में नहीं, इन ब्यौरों का स्पष्टीकरण दिए जाने के बाद आवेदक-फर्म द्वारा यह स्थिति स्वीकार कर ली गई थी।

2.8 जब ये प्रक्रियाएं प्रगति पर थीं, आवेदक-फर्म ने हमारे द्वारा सीपीटी में 12 नवंबर, 99 को निर्धारित संयुक्त सुनवाई को स्थगित करने के लिए इस आधार पर अनुरोध किया था कि विभिन्न पक्षों से प्राप्त 'टिप्पणियों' का अध्ययन करने के लिए और कुछ अन्य, जिन्हें प्राधिकरण ने नहीं लिखा था, को शामिल

करने के लिए अधिक समय की आवश्यकता थी। इस अनुरोध को स्वीकार कर लिया गया था। दिनांक 12 नवंबर, 99 के लिए निर्धारित सुनवाई स्थगित कर दी गई थी। प्राप्त सभी टिप्पणियों की प्रतियां आवेदक-फर्म को सूचना के रूप में दे दी गई थी। आवेदक-फर्म द्वारा पहचाने गए 'अन्य पक्षों' को भी टिप्पणियां देने और यदि संभव हो, बाद में आयोजित की जाने वाली संयुक्त सुनवाई में भाग लेने के लिए सूचना भेजी गई थी।

2.9 पूर्ववर्ती पैराग्राफ में उल्लिखित कार्रवाई में समय लगना था, इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर याचिका का निपटारा करना इस प्राधिकरण के लिए असंभव था। इसलिए, उच्च न्यायालय से समय-सीमा बढ़ाने का अनुरोध किया गया था। उच्च न्यायालय ने अनुरोध पर विचार किया और समय-सीमा को 8 सप्ताह के लिए बढ़ा दिया था। बढ़ाई गई यह समय-सीमा 18 जनवरी, 2000 के आसपास समाप्त हो गई थी। परंतु 10 जनवरी, 2000 को सीपीटी में संयुक्त सुनवाई के समय मामले से संबंधित दोनों पक्ष अर्थात् सीपीटी और आवेदक-फर्म लिखित अनुरोध दाखिल करने के लिए समय चाहते थे। यह अनुरोध स्वीकार कर लिया गया था। सीपीटी को लिखित अनुरोध दाखिल करने के लिए 20 जनवरी, 2000 तक का समय दिया गया था और आवेदक-फर्म को तत्संबंधी अपना प्रत्युत्तर दाखिल करने के लिए 25 जनवरी, 2000 तक का समय दिया गया था। चूंकि, 25 जनवरी, 2000 तक कोई लिखित अनुरोध प्राप्त नहीं हुए थे, इसलिए कुछ और समय तक प्रतीक्षा करने का निर्णय किया गया था। लेकिन, बढ़ी हुई इस अवधि के दौरान भी किसी पक्ष से कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई, इसलिए उपलब्ध सूचना के आधार पर प्राधिकरण द्वारा मामले को अंतिम विचार के लिए हाथ में लिया गया। इसी दौरान, प्राधिकरण की बैठक 4 फरवरी, 2000 को कार्यसूची में इस मामले को शामिल किए बिना आयोजित की गई थी। चूंकि, 15 मार्च, 2000 को इससे अगली बैठक आयोजित की जानी थी, इसलिए उस बैठक में अंतिम विचार के लिए इस मामले को हाथ में लिया गया। (दोनों पक्षों से लिखित अनुरोध सहमत समय-सीमा की समाप्ति के काफी बाद प्राप्त हुए थे, इसलिए उन्हें शामिल नहीं किया गया था, क्योंकि तब तक मामला प्राधिकरण द्वारा अंतिम विचार के लिए प्रस्तुत किया जा चुका था)।

3. यद्यपि रिट याचिका में आवेदक-फर्म ने इस मामले पर विचार करने के इस प्राधिकरण के क्षेत्राधिकार पर प्रश्न उठाया था, लेकिन 10 जनवरी, 2000 को संयुक्त सुनवाई के समय आवेदक-फर्म के वरिष्ठ परामर्शदाता ने इस प्राधिकरण के क्षेत्राधिकार को स्वीकार कर लिया था और इस पर पूरी तरह सहमत थे। उन्होंने स्वीकार किया कि चूंकि, भारत संघ की सरकारी टीएएमपी को उपयुक्त मंच मानती है और उच्च न्यायालय ने भी इसी विचार का समर्थन किया था, इसलिए क्षेत्राधिकार संबंधी कोई समस्या बिल्कुल नहीं हो सकती।

4.1 सीपीटी ने इंगित किया था कि मामला 1994-98 की अवधि से संबंधित है। इसे देखते हुए, इस मामले में प्रभारों के किसी प्रकार के संशोधन के कारण यह मामला 'पूर्वप्रभावी' संशोधन का मामला बन जाएगा। टीएएमपी से केवल संभावित संशोधनों का आदेश जारी करने की आशा थी। इसे देखते हुए, इस मामले में कोई सार्थक हस्तक्षेप नहीं हो सकता था।

4.2 यद्यपि, सीपीटी ने आगे कार्यवाहियों को रोकने के लिए इस मुद्दे पर मूल आपत्ति के रूप में जोर नहीं दिया था, इसलिए इस मुद्दे पर विशेषकर यहां इसके अत्यधिक महत्व के मद्देनजर कार्रवाई करना आवश्यक होगा। यहां यह देखना भी उचित होगा कि सभी पत्तन न्यासों की ओर से उत्तर देने के समय भारतीय पत्तन संघ के प्रबंध निदेशक ने भी यह मुद्दा उठाया था।

4.3 यह सच है कि इस प्राधिकरण के आदेशों की सामान्यतया भविष्य में प्रचालन की आशा की जाती है। परंतु, विधि मंत्रालय द्वारा दिए गए कानूनी परामर्श के आधार पर भूतल परिवहन मंत्रालय ने हमें परामर्श दिया है कि असाधारण परिस्थितियों में प्राधिकरण अपने आदेशों के पूर्वप्रभाव से प्रचालन का आदेश दे सकता है। इस संदर्भ में यह विचार करना उचित है कि क्या इस मामले को शासित करने वाली कोई ऐसी असाधारण परिस्थितियां हैं।

5. आवेदक—फर्म ने अपने अभ्यावेदन के समर्थन में सात मुख्य तर्क प्रस्तुत किए हैं:—

- (i) बर्थ किराया प्रभार तोड़े जाने वाले जहाज के पंजीकृत जीआरटी के अनुसार लगाए जाते हैं। जहाज तोड़ने के समय जीआरटी स्थिर नहीं रहता है, यह क्रमिक रूप में कम होता जाता है। इसलिए, एक स्थिर जीआरटी आंकड़े के अनुसार बर्थ किराया प्रभार का अनुमान लगाना तर्कसंगत नहीं होगा।
यह मानना होगा कि जीआरटी आंकड़े में कमी का अनुमान प्रतिदिन नहीं लगाया जा सकता। इसे देखते हुए और व्यावहारिक दृष्टिकोण से भी पंजीकृत जीआरटी के 50 प्रतिशत के औसत आंकड़े को आकलन के लिए एक तर्कसंगत आधार के रूप में अपनाया जा सकता है।
- (ii) बर्थ किराया वसूल करने के लिए तोड़े जाने वाले जहाज को समुद्र में जाने वाले जहाज के बराबर माना जाता है और समान दर वसूल की जाती है। यह असंगत है।
- (iii) सीपीटी अत्यधिक उंची दरें वसूल करता है, जबकि वह कोई सुविधा उपलब्ध नहीं कराता।
- (iv) सीपीटी जहाज तोड़ने के प्रचालन के दौरान बर्थ किराया प्रभार, घाटशुल्क और भूमि किराया वसूल करता है। अन्य शब्दों में, संदर्भगत पोत को उस समय एक जहाज, कार्गो और "कार्गो से भिन्न" सामग्री के रूप में माना जाता है। यह बिल्कुल भी तर्कसंगत नहीं है।
- (v) आवेदक—फर्म द्वारा प्रस्तुत विशेषज्ञ (मैसर्स नार्मन, स्टीवर्ट एंड कं0 प्राइवेट लिमिटेड) की सर्वेक्षण रिपोर्ट से देखा जा सकता है कि जीआरटी 'भार' के बजाय 'स्थान' को दर्शाता है। इसलिए, भार के स्थिर आंकड़े के संदर्भ में बर्थ किराया प्रभार लगाना तर्कसंगत नहीं होगा।
- (vi) जहाज तोड़ने के मामले में पंजीकरण प्रमाणपत्र को जहाज तोड़ने का प्रचालन आरंभ करने से पहले रद्द कर दिया जाएगा। इसे देखते हुए किसी पोत के जीआरटी का मूल्यांकन कैसे किया जा सकता है 9
- (vii) भारतीय नौवहन निगम, भारतीय राष्ट्रीय पोत स्वामी संघ और भारतीय पत्तन संघ ने (भी) आवेदक—फर्म के प्रस्ताव का अनुमोदन किया है।

6. आगे बढ़ने से पूर्व यह आवश्यक होगा कि इन मुद्दों पर विचार किया जाए। उन्हें कमशः निम्नवत निपटारा जा सकता है:-

(i) पोत के पंजीकृत जीआरटी के अनुसार ऐसे मामलों में लगाए जाने वाले बर्थ किराया प्रभार के आकलन की पद्धति सीपीटी में काफी समय पहले से ही प्रचलन में रही है। अन्य महापत्तन (यथा, मुंबई पत्तन न्यास) जो कि जहाज तोड़ने के कार्यकलाप चलाते हैं, वे भी इसी पद्धति का अनुसरण करते हैं। सीपीटी ने इस मामले में कुछ भी नया नहीं किया है।

तोड़े गए जहाज के जीआरटी में कमी आ सकती है, परन्तु इसका आधार वही रहता है। अन्य शब्दों में, यह बर्थ की लम्बाई के बराबर स्थान को घेरे रखता है। परिणामतः, बर्थ किसी अन्य जहाज के अन्य उपयोग के लिए उपलब्ध नहीं हो पाता। अतः इसे बर्थ की 'विकल्प लागत' कहना प्रासंगिक होगा।

यदि बर्थ उपलब्ध होती तो सीपीटी इसका उपयोग अन्य जहाजों को ठहराने के लिए कर सकता था। यह संभव है कि अधिक जीआरटी वाले अन्य जहाज (भी) अधिक राजस्व देने के लिए पहुंचे हों।

आवेदक फर्म ने यह कहा है (रिट याचिका का आधार ।।।) कि जीआरटी 'स्थान' को व्यक्त करता है न कि 'भार' को। शायद यह तर्क असावधानीवश से सीपीटी के इस दावे को प्रबल बनाता है कि तोड़ा गया जहाज समान स्थान घेरे रखता है। इसके अतिरिक्त, सीपीटी ने आवेदक-फर्म के कपटपूर्ण इरादे को इस तर्क के आधार पर स्पष्ट करना चाहा है कि यदि जीआरटी सिर्फ घेरे गए स्थान का ही द्योतक है तो सिर्फ जहाज के छत को हटा देने से ही जीआरटी को अनिवार्यतः घटकर शून्य हो जाना चाहिए।

उपर्युक्त कथन के आलोक में परिकलन के उद्देश्य से स्थिर जीआरटी आंकड़े अपनाने की पद्धति को त्रुटिपूर्ण नहीं कहा जा सकता। जो भी हो, विभिन्न आंकड़ों की श्रृंखला से परिकलन करना व्यावहारिक नहीं है और 50 प्रतिशत जीआरटी के आंकड़े को अपनाने का कोई तर्काधार नहीं है, इसे सिर्फ तदर्थ एवं स्वेच्छाचारिता माना जा सकता है।

(ii) जहाज (तोड़े जाने वाले) की तुलना समुद्र में जाने वाले जहाज से करना ज्यादा प्रासंगिक नहीं है। लगाया जाने वाला शुल्क बर्थ के किराये का होता है, जिसे दरों के मान में पृथक् से अधिसूचित किया जाता है। बर्थ का उपयोग ही ज्यादा प्रासंगिक है। चूंकि, उपरोक्त (i) में दिए गए स्पष्टीकरण के अनुसार जहाज (तोड़े जाने वाले) का तल बर्थ का उपयोग करता रहता है, अतः इससे दूसरे जहाजों के लिए बर्थ उपलब्ध नहीं हो पाती है। भारित शुल्क किसी भी प्रकार से अटपटा नहीं है।

(iii) आवेदक-फर्म द्वारा सीपीटी पर कोई सुविधा नहीं देने के बावजूद काफी अधिक दर भारित करने का आरोप अनुबोध प्रतीत होता है। प्रथमतः, भारित शुल्क बर्थ के लिए है न कि अन्य सुविधाओं के लिए। द्वितीय, आवेदक-फर्म ने सीपीटी के साथ व्यापारिक करार किया है और उसे लागू होने वाले निबंधन एवं शर्तों की पूरी जानकारी थी। किए जाने वाले भुगतान के बारे में कम्पनी को कोई पूर्वापत्ति नहीं थी। कम्पनी ने अपनी ओर से सुविधाओं के अभाव का कोई

विरोध नहीं किया। अतः अब अकस्मात् अनेक प्रकार की आपत्तियां उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि जहाज तोड़ने के प्रत्येक मामले में सीपीटी ने प्रचलित दर के अनुसार बर्थ प्रभार भारित करने के बारे में आवेदक-फर्म के साथ विस्तृत विचार-विमर्श किया। इसके अतिरिक्त, दोनों पार्टियों में जो औपचारिक करार हुआ था, उसमें प्रचालन सम्बन्धी निबंधन एवं शर्तों (खासकर जहाज के प्रमाणित जीआरटी के सन्दर्भ में बर्थ प्रभार) का स्पष्ट उल्लेख था और शर्तें तोड़े जाने वाले प्रत्येक जहाज के मामले में लागू होती थीं। आवेदक-फर्म करार निष्पन्न करते समय कोई भी आपत्ति उठाने के लिए स्वतंत्र थी और इससे भी अच्छा यह रहता कि कम्पनी कोई ऐसा करार करती ही नहीं। बिना किसी विरोध/आपत्ति के करार करने की प्रक्रिया आगे बढ़ाकर (यहां तक कि करार में निर्धारित भुगतान अग्रिम तौर पर कर दिया गया) इस चरण में इस प्रकार के आधारभूत मुद्दों को पुनः प्रारंभ करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस मामले में विबन्धन का सिद्धान्त अवश्य लागू किया जाना चाहिए।

जैसाकि सीपीटी ने संयुक्त सुनवाई में तर्क दिया है, आवेदक-फर्म ने प्रकटतः सीपीटी के साथ व्यापारिक सौदा करते समय सीपीटी को नाराज करना उचित नहीं समझा। अब जबकि आवेदक-फर्म ने व्यापारिक सौदा छोड़ दिया है तो अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा में विशुद्ध रूप से काल्पनिक मांग उठा रही है।

- (iv) आवेदक-फर्म का जहाज (तोड़े जाने वाले) के बारे में यह तर्क कि इसे एक साथ ही पोत, कार्गो, "कार्गो से भिन्न" अन्य सामग्री माना जा रहा है, क्रियाकलापों की नियमित कमबद्धता में सनसनी पैदा करने का प्रयास माना जा सकता है। जैसाकि सीपीटी ने स्पष्ट किया है, जब जहाज (तोड़े जाने वाले) बर्थ का स्थान घेरे रहता है तो उसे बर्थ किराया प्रभार भारित करने के उद्देश्य से जहाज माना जाता है, जब तोड़ी गई सामग्री को घाट पर रखा जाता है, तो उसे घाट-किराया लगाने की दृष्टि से कार्गो माना जाता है, और जब तोड़ी गई (अथवा कोई अन्य) सामग्री पत्तन के किसी अन्य भाग में रखी जाती है तो इसे भूतल किराया भारित करने की दृष्टि से "कार्गो से भिन्न" अन्य सामग्री माना जाता है।

यहां पुनः यह कहा जा सकता है कि आवेदक-फर्म ने अपने मामले की तुलना समुद्र में जाने वाले जहाज से की है, ताकि शुल्क भारित करने में अपने साथ भेदभाव बरतने का आरोप लगाया जा सके। यह तथ्यात्मक दृष्टि से सही नहीं है। बर्थ का उपयोग करने वाले किसी जहाज से बर्थ किराया लिया जाता है, कार्गो प्रचालन के लिए घाट का उपयोग करने वाले जहाज से घाटशुल्क लिया जाता है और जहाज-संबंधी या कार्गो-संबंधी प्रचालन के लिए पत्तन के किसी अन्य भाग का उपयोग करने वाले जहाज से भूतल किराया लिया जाता है।

- (v) आवेदक-फर्म द्वारा मेसर्स नार्मन एण्ड स्टीवर्ट एण्ड कं० प्रा० लि० के सर्वेक्षण रिपोर्ट को प्रस्तुत करना बहुत प्रासंगिक नहीं है। जैसाकि उपर्युक्त (i) में स्पष्ट किया गया है, 'स्थान' एवं 'भार' के बारे में किया जाने वाला वाक्छल गलत सोच पर आधारित है।

(vi) यह सच है कि जहाज तोड़ने के मामले में विखण्डन कार्य प्रारंभ करने के पूर्व पंजीकरण प्रमाण-पत्र को रद्द करना होगा। परन्तु, उसके बाद जहाज के जीआरटी के आकलन का कोई आधार न होने संबंधी आवेदक-फर्म की आपत्ति को सिर्फ तकनीकी दुराग्रह माना जा सकता है। प्रमाण-पत्र का पहले रद्द किया जाना अन्य संभाव्य घटना से बचाव के लिए एवं कानूनी शर्त है। प्रमाण-पत्र रद्द किए जाने एवं विखण्डन प्रक्रिया प्रारंभ होने के बीच ऐसा कुछ भी असाधारण नहीं होता, जो प्रसंगाधीन जहाज के जीआरटी में कोई भारी परिवर्तन ला दे। अतः, ऐसा कोई कारण नहीं है कि प्रमाण-पत्र में प्रविष्टि को प्रसंगाधीन जहाज के जीआरटी निर्धारण का वैध आधार नहीं माना जाए।

यहां यह मानना प्रासंगिक है कि जब आवेदक-फर्म जीआरटी के 50 प्रतिशत की दर पर बर्थ किराया प्रभार लगाने का प्रस्ताव करती है और स्वयं ही कम्पनी रद्द किए गए पंजीकरण प्रमाण-पत्र पर आश्रित होने का मार्ग चुनती है।

(vii) यह सच है कि भारतीय नौवहन निगम तथा भारतीय राष्ट्रीय पोतस्वामी संघ ने आवेदक-फर्म के प्रस्ताव का समर्थन किया है। यह सच नहीं है कि इण्डियन पोर्ट्स एसोसिएसन ने इसका समर्थन किया है, आईपीए के प्रबंध निदेशक ने सिर्फ यह कहा है कि टीएएमपी बाद में दरों को भूतलक्षी प्रभाव से परिवर्तित नहीं कर सकती, यह भविष्य में जहाज तोड़ने के लिए प्रशुल्क निर्धारित करते समय आवेदक-फर्म के दावे को ध्यान में रख सकती है।

जैसाकि सीपीटी ने तर्क दिया है, एससीआई और आईएनएसए इस अर्थ में हितबद्ध पार्टियां हैं कि आवेदक-फर्म के दावे की स्वीकृति से उन्हें भविष्य में अपने जहाज के टुकड़े करने से मौद्रिक लाभ प्राप्त होगा। यह कहना कि उनके विचारों पर इस सन्दर्भ में भरोसा नहीं किया जा सकता, के कारण उनकी विश्वसनीयता पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता, जैसाकि मैसर्स एम.जे.आर. स्टीलस की ओर से उल्लेख किया गया है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि न तो भारतीय नौवहन निगम और न ही भारतीय राष्ट्रीय पोतस्वामी संघ ने ऐसा कोई तर्क दिया है जो कि प्रचलित प्रणाली पर अकाट्य प्रश्न उठाता हो अथवा अपने दृष्टिकोण के समर्थन में सीपीटी द्वारा दिए गए तर्क को समाप्त करता हो।

7.1 आवेदक-फर्म ने दावा किया है कि वे यह मामला पहले इसलिए दाखिल नहीं कर सके, क्योंकि उन्हें गलत प्रभार का पता फरवरी, 98 में लेखा की अनंतिम विवरणी प्राप्त होने पर ही चल पाया था। जैसा कि पहले स्पष्ट किया गया है अभिलेखों की जांच करने पर पता चलेगा कि तथ्यों की दृष्टि से यह विवरणी सही नहीं है। सीपीटी ने तोड़े जाने वाले प्रत्येक जहाज के लिए अलग-अलग ब्यौरे दिए हैं। विचार-विमर्श, कार्यवृत्त तैयार करना, करार निष्पन्न करना और लेखा तैयार करने जैसे कार्य जहाजवार किए गए हैं। इस मामले में, जैसा कि सीपीटी द्वारा स्पष्ट किया गया है कि समेकित अंतिम लेखा विवरणी 'अनुरोध' पर भेजी गई थी। इस पृष्ठभूमि में, यह विश्वास करना मुश्किल है कि क्या आवेदक फर्म को ब्यौरों की पहले जानकारी नहीं थी, विशेषकर जब इसके द्वारा करारों में उल्लिखित परिकलनों के अनुसार अग्रिम भुगतान किए गए थे। यह भी उल्लेखनीय है कि समेकित अंतिम लेखा विवरणी में केवल परिकलनों के

ब्यौरे दिए जाते हैं और इस प्रकार किसी नए आधार का उल्लेख नहीं किया जाता है। जैसाकि पहले स्पष्ट किया गया है कि परिकलन का आधार गत वर्षों में वही रहा है और सभी संबंधितों को इसकी अच्छी तरह जानकारी थी।

7.2 उपर्युक्त के आलोक में यह आरोप लगाने का कोई तर्क नहीं है कि इस मामले में न्याय की हत्या हुई है। प्राधिकरण की यह उल्लिखित स्थिति रही है कि यह पारदर्शिता, निष्पक्षता और उद्देश्य के साथ कार्य करेगा। इसे देखते हुए प्राधिकरण मैसर्स एम.जे.आर. स्टीलस के इस तर्क का समर्थन करता है कि "किसी पत्तन न्यास के लिए महत्वपूर्ण आशय का तथ्य न्याय पाने के लिए किसी याचिका को नहीं रोकेगा।" इस मामले में कोई अन्याय नहीं हुआ है। इस मामले को शासित करने वाली ऐसी कोई असाधारण परिस्थितियां नहीं हैं कि जिनके कारण सुस्थापित पद्धतियों और विधिवत् अधिसूचित दरों में पूर्वप्रभाव से परिवर्तन किया जाए।

8.1 ऊपर दिए गए विश्लेषण की पृष्ठभूमि में, इस मामले की जांच के दौरान एकत्रित समग्र सूचना के संदर्भ में और समग्र ध्यान दिए जाने के आधार पर यह प्राधिकरण आवेदक-फर्म (मैसर्स श्रुति स्टीलस लिमिटेड) का अभ्यावेदन रद्द करता है।

8.2 इस आदेश की एक प्रति माननीय कलकत्ता उच्च न्यायालय को इस प्राधिकरण को उसके निर्देश के अनुपालन की सूचना के रूप में प्रस्तुत कर दी जाएगी।

8.3 चूंकि, उच्च न्यायालय द्वारा अनुमत्य बढ़ाई गई समय-सीमा के भीतर भी इन कार्यवाहियों का समापन करना हमारे लिए संभव नहीं था, इसलिए अनुपालन की सूचना भेजते समय माननीय उच्च न्यायालय से विलंब को माफ करने का अनुरोध किया जाए। यहां यह उल्लेखनीय है कि यह विलंब हमारी ओर से किसी प्रकार की लापरवाही के कारण नहीं था, बल्कि दोनों पक्षों द्वारा अपने प्रत्युत्तर देने हेतु लिये गए समय के कारण था।

9. इस मामले में अपनाई गई मूल्यांकन प्रणाली की आधारभूत मजबूती के आलोक में इस प्राधिकरण के लिए यह आवश्यक दिखाई नहीं देता है कि जहाज तोड़ने के प्रचालनों के लिए प्रशुल्क संरचना को तर्कसंगत बनाने के लिए वह स्वतः ही आगे कोई कार्रवाई करे। यदि आवश्यक हो और यदि जब कभी प्रणाली में भावी आधार पर परिवर्तन करने के लिए कोई प्रस्ताव/अभ्यावेदन प्राप्त होता है, तब इस मामले पर आगे विचार किया जा सकता है।

एस. सत्यम, अध्यक्ष

[विज्ञापन/3/4/असाधारण/143/99]

TARIFF AUTHORITY FOR MAJOR PORTS

NOTIFICATION

New Delhi, the 28th March, 2000

No. TAMP/79/99-CPT.—In exercise of the powers conferred by Section 49 of the Major Port Trusts Act, 1963 (38 of 1963), the Tariff Authority for Major Ports hereby disposes of the application filed by M/s. Shruti Steels Limited for ordering a 50% refund to it of the berth hire charges collected from it by the Calcutta Port Trust for the ships broken by it during 1994—97, as in the Order appended hereto.

391/2000-2

Case No. TAMP/79/99-CPT

M/s. Shruti Steels Limited

Applicant

V/s

The Calcutta Port Trust

Respondent

ORDER

(Passed on this 15th day of March 2000)

This case relates to an application filed by the Applicant-Firm (M/s. Shruti Steels Limited of Calcutta) for ordering a 50% refund to it of the berth hire charges collected from it by the Calcutta Port Trust (CPT) for the ships broken by it during 1994-97.

2. The facts of the case in brief are as follows:

2.1. The Applicant-Firm (M/s. Shruti Steels Limited) was registered as a Ship-Breaking Company in Calcutta. It was carrying on this business at the CPT. The case relates in particular to 8 ships broken by it at the CPT during 1994-97. In accordance with their established practice, in each of these 8 cases, the CPT charged (full) berth hire with reference to the certified GRT of the vessel concerned for the entire period of ship-breaking. In every case, there were detailed discussions between the CPT and the Applicant-Firm about the procedures/notified Scale of Rates/charges/ etc., issue of minutes of these discussions, conclusion of specific Agreements about the place of activity/period of activity/rates to be levied/etc., and detailed billing of charges.

2.2. In accordance with the established practice of the CPT, and following the detailed procedure described above, the Applicant-Firm had carried on its ship-breaking business at the CPT during 1994-97. There was no protest from it either about the procedures adopted or about the facilities provided or (even) about the rates applied. After the breaking of the eighth ship in reference in 1997, the Applicant-Firm had apparently wound up this business at the CPT.

2.3. Thereafter, in January 99, the Applicant-Firm approached the Ministry of Surface Transport (MOST) with a request for waiver of berth hire charges and issue of instructions under Section 54 of the Major Port Trusts Act (1963) to the CPT. This application was disposed off by the MOST with the following observations:

"... the rates fixed for berth hire charges by the Calcutta Port Trust (CPT), since have the approval of the Government of India, will

remain as it is. However, the firm may either approach the CPT to refer the matter to Tariff Authority for Major Ports (TAMP)... ..; or, the firm may themselves approach the TAMP for getting redressal."

2.4. Aggrieved by this response of the MOST, the Applicant-Firm thereafter filed a writ petition in the High Court of Calcutta on the ground that, under Section 54 of the Major Port Trusts Act, it was the Central Government that had the power to amend and/or modify the Scale of Rates and no other Authority (including the Tariff Authority for Major Ports) had the power to do so.

2.5. In the writ petition, the Union of India raised a preliminary objection that since the petitioner had not approached the Tariff Authority for Major Ports, the writ petition should be deemed to be premature.

2.6. This preliminary objection of the Union of India was upheld by the High Court of Calcutta; and, the writ petition was disposed off by it with a direction to this Authority to treat the writ petition as a representation and dispose it off within a period of 8 weeks from the date of communication of the order by passing a reasoned order thereon after giving, with due notice to all the parties, an opportunity of hearing.

2.7. As directed by the High Court of Calcutta, the Applicant-Firm's representation was registered as a tariff case. It was processed in accordance with the procedures established by the Authority and strictly with reference to its Transaction of Business Regulations. The Applicant-Firm objected to the process of consultations (with interested parties/groups) commenced by the Authority. The Applicant-Firm (acting through its Director Shri. S.K. Jain) wanted this case to be treated as a dispute only between itself and the CPT. This contention of the Applicant-Firm was not accepted for the reason that we had treated this as a regular case registered with this Authority for being processed in accordance with its Regulations. In our understanding, the Hon'ble High Court had directed this Authority to deal with this case in the context of the objection that all available forums had not been exhausted before approaching the High Court. Accordingly, we took up this case as a regular case registered with us and not as a case remitted by the High Court with any special directions about the parties, procedures, etc. Upon being explained these details, this position was accepted by the Applicant-Firm.

2.8. Even as these processes were in progress, the Applicant-Firm made a request for postponement of the joint hearing fixed by us at the CPT on 12 November 99 on the ground that more time was needed to study the 'comments' received from different parties as also for involving some others who had not been addressed by the Authority. This request was accepted. The hearing slated for 12 November 99 was adjourned. Copies of all comments received were given to the Applicant-Firm by way of feedback information. Also, the 'other parties' identified by the Applicant-Firm were given notice to give comments and participate, if possible, in the joint hearing to be held later.

2.9. Action as described in the preceding paragraph was bound to involve time thereby making it impossible for this Authority to dispose of the petition within the time limit fixed by the High Court. A request was, therefore, made to the High Court to extend the time limit. The High Court considered the request and extended the time limit by 8 weeks. This extended time limit expired around 18 January 2000. But, at the joint hearing in the CPT on 10 January 2000, the two parties to the case – viz., the CPT and the Applicant-Firm – wanted time to file written submissions. This request was accepted. The CPT was given time till 20 January 2000 to file its written submissions; and, the Applicant-Firm was given time till 25 January 2000 to file its response thereto. Since no written submissions were received by 25 January 2000, it was decided to wait for some more time. Since nothing had been heard from either party even during this extended period, the case was taken up for final consideration by the Authority on the basis of the information available. In the meanwhile, the Authority's meeting on 4 February 2000 was held without any chance for this case being included in the agenda. Since the meeting on 15 March 2000 was the meeting next to that, this case was taken up in that meeting for final consideration. (The written submissions received from both sides long after expiry of the time limit agreed upon were not taken into account as the case had by then been presented for final consideration by the Authority.)

3. Although, in the writ petition, the Applicant-Firm had questioned the jurisdiction of this Authority to consider this case, at the time of the joint hearing on 10 January 2000, the Applicant-Firm's Senior Counsel accepted the jurisdiction of this Authority and expressly submitted to it. He conceded that, since the Union of India recognised the TAMP as the appropriate forum and since the High Court had gone along with that contention, there could be no jurisdictional problems at all.

4.1. It was pointed out by the CPT that the case pertained to the period 1994-98. That being so, any modification of charges in this case would make it a case of 'retrospective' revision. The TAMP was expected to order revisions only prospectively. That being so, there could be no meaningful intervention in this case.

4.2. Even though the CPT did not press this point as a preliminary objection to bar further proceedings, it will be necessary to deal with this issue specifically here in view of its substantive significance. It will also be relevant here to note that the Managing Director of the Indian Ports Association, responding on behalf of all the Port Trusts, had also raised the same point.

4.3. It is true that ordinarily the orders of this Authority are expected to have prospective operation. But, we have been advised by the MOST, on the strength of a legal advice given by the Ministry of Law, that, in extraordinary circumstances, the Authority can give retrospective operation to its orders. What is relevant for consideration in this context is whether there are any such extraordinary circumstances governing this case.

5. The Applicant-Firm has advanced seven main arguments in support of his representation:

(i). Berth hire charge is levied with reference to the registered GRT of the vessel to be broken. In ship-breaking, GRT cannot be constant; it progressively declines. It will be illogical, therefore, to estimate berth hire charges with reference to a constant GRT figure.

It has, nevertheless, to be recognised that decline in the GRT figure cannot be estimated every day. That being so, from a practical point of view, an average figure of 50% of the registered GRT can be adopted as a reasonable basis for calculation.

(ii). For levy of berth hire, a ship to be broken is equated with an ocean-going vessel in the sense that the same rate is charged. This is absurd.

(iii). The CPT charges very high rates when it does not provide any facilities at all.

(iv). The CPT levies berth hire charge, wharfage, and ground rent in the course of a ship-breaking operation. In other words, the vessel in reference is treated at the same time as a ship, as a cargo, and as material 'other than cargo'. This is totally untenable.

(v). As can be seen from the Survey Report of an Expert (M/s. Norman, Stewart & Co. Pvt. Limited), produced by the Applicant-Firm, GRT represents 'space' and not 'weight'. It will, therefore, be illogical to levy berth hire charge with reference to the constant figure of weight.

(vi). In a case of ship-breaking, the Certificate of Registration will be cancelled before commencement of the dismantling operation. That being so, how can the GRT of the vessel be assessed at all?

(vii). The Shipping Corporation of India, the Indian National Shipowners' Association, and (even) the Indian Ports Association have all endorsed the Applicant-Firm's proposition.

6. Before proceeding further, it will be necessary to deal with these issues. They can be disposed of seriatim as under:

(i). The practice of calculating, with reference to the registered GRT of the vessel, the berth hire charge leviable in such cases has been in vogue at the CPT since very long. The other major port which caters to ship-breaking activity (viz., the Mumbai Port Trust) also follows the same practice. The CPT has not done anything new in this case.

The GRT of the broken ship may be declining; but, its base remains the same. In other words, it continues to occupy the same length of the berth. Consequently, the berth will not be available for any other use. What will be relevant, therefore, will be the 'opportunity cost' of the berth.

Had the berth been available, the CPT could have used it to bring in other ships. It is possible that other vessels (even) of greater GRT may have arrived to yield higher revenue earnings.

The Applicant-Firm has urged (in Ground III of the Writ Petition) that GRT represents 'space' and not 'weight'. This argument, perhaps, inadvertently reinforces the CPT claim about the broken ship occupying the same length of space. This apart, the CPT has sought to expose the fallacy of the Applicant-Firm's contention with the argument that, if GRT is to signify a covered space, then, removal only of the ship's roof must reduce the GRT to zero!

In the light of what has been stated above, the practice of adopting a constant GRT figure for calculation purposes cannot be said to be erroneous. In any case, reckoning with a series of varying figures may not be a practicable proposition. And, there is no rational basis in adopting a figure of 50% of the GRT; it can only be seen to be *ad hoc* and arbitrary.

- (ii). The comparison of a ship (to be broken) with an ocean-going vessel cannot be said to be very relevant. The charge to be levied is for berth hire which is separately notified in the Scale of Rates. What is relevant, therefore, is occupancy of the berth. Since, as explained in (i) above, the bottom of the ship (to be broken) continues to occupy the (whole) berth thereby rendering it unavailable for berthing other ships, there is nothing absurd about the charge levied.
- (iii). The Applicant-Firm's complaint about the CPT charging very high rates even when it gives no facilities appears to be an afterthought. Firstly, the charge is for a berth and not for facilities. Secondly, the Applicant-Firm did business with the CPT in full knowledge of the terms and conditions applicable. There was no demur from its side about the payments to be made. There was no protest from its side about lack of facilities. It cannot, therefore, be allowed suddenly now to come up with various objections.

It is noteworthy in this connection that, in each case of ship-breaking, the CPT held detailed discussions with the Applicant-Firm about the levy of berth charges, in accordance with the prevailing Scale of Rates. Furthermore, formal Agreements specifying clearly the Terms and Conditions of the operation (especially about application of berth hire charges with

reference to the certified GRT of the vessel) were concluded between the two parties in respect of every ship to be broken. The Applicant-Firm was free to raise any objection at the time of conclusion of such Agreements; or, better still, the Applicant-Firm need not have entered into any such Agreement at all. Having gone ahead with conclusion of such Agreements, without any trace of protest/ objection, (and, even made advance payments as stipulated therein) it cannot at this stage be allowed to re-open such basic issues. The principle of *estoppel* must be held to be operative in this case.

As has been contended by the CPT in their arguments at the joint hearing, the Applicant-Firm apparently did not wish to annoy the CPT while doing business with it. Now that the Applicant-Firm has given up the business, it has come up with a purely speculative demand for refunds in an attempt to make undue gains.

- (iv). The Applicant-Firm's argument about the ship (to be broken) being treated simultaneously as a vessel, as a cargo, and as a material 'other than cargo' appears to be an attempt to sensationalise an otherwise routine sequence of activity. As has been explained by the CPT, when the ship (to be broken) occupies the berth, it is treated as a ship for the purpose of levy of berth hire charge; when the broken material is placed on the wharf, it is treated as cargo for the purpose of levy of wharfage; and, when the broken (or, any other) material occupies any other part of the port, it is treated as material 'other than cargo' for the purpose of levy of ground rent.

Here, again, the Applicant-Firm has compared its case with an ocean-going vessel to allege discrimination against it in the matter of levy of charges. This is not factually correct. Any vessel occupying the berth is charged for berth hire; any vessel using the wharf for cargo operation is charged with wharfage; and, any vessel occupying other space at the port for purposes of vessel-related or cargo-related operations is charged ground rent.

- (v). Production by the Applicant-Firm of a Survey Report by M/s. Norman and Stewart & Co. Pvt. Limited does not appear to be very relevant. As has been explained in (i) above, the quibbling about 'space' and 'weight' is misconceived.

- (vi). It is true that in a case of ship-breaking, the Certificate of Registration will be cancelled before commencement of the dismantling operation. But, the Applicant-Firm's objection about there being no basis thereafter for estimation of the ship's GRT can only be seen to be a rigid technicality. The requirement about prior cancellation of the Certificate is a legal stipulation to guard against other eventualities. Nothing extraordinary happens between cancellation of the Certificate and commencement of the

dismantling operations to drastically alter the GRT of the ship in reference. There is, therefore, no reason why the entry in the Certificate cannot form a valid basis for assessment of the GRT of the ship in reference.

It is relevant here to recognise that, when the Applicant-Firm proposes levy of berth hire charges @ 50% of the GRT, the Applicant-Firm itself chooses to rely on the cancelled Certificate of Registration!

- (vii). It is true that the Shipping Corporation of India (SCI) and the Indian National Shipowners' Association (INSA) have endorsed the Applicant-Firm's proposition. It is not true that the Indian Ports Association (IPA) has endorsed it; the Managing Director of the IPA has only stated that the TAMP cannot alter the rates retrospectively; if at all, it can keep the Applicant-Firm's contention in view while fixing tariffs for ship-breaking in future.

As has been agued by the CPT, the SCI and the INSA are interested parties in the sense that acceptance of the Applicant-Firm's contention will have a favourable monetary impact when they get to scrapping their vessels in future. To say that their views cannot be relied upon in this context does not amount to questioning their credentials as lamented on behalf of M/s. MJR Steels. What is of significance is the fact that neither the SCI nor the INSA has advanced any arguments that irrefutably question the system in vogue or demolish the logic advocated by the CPT in support of its stance.

7.1. The Applicant-Firm has claimed that it could not file this case earlier as it came to know about the defective levy of charges only upon receipt of the provisional statement of accounts in February 98. An examination of the records will show that, as has been explained earlier, this is not a factually accurate statement. Details are established by the CPT separately for each ship to be broken. Discussions are held, minutes are drawn up, Agreements are concluded, and accounts are settled vessel-wise. In this case, as explained by the CPT, a consolidated final account statement was sent 'on request'. In this backdrop, it is difficult to believe that the Applicant-Firm was not aware earlier of the details, especially when advance payments were made by it in accordance with the calculations shown in the Agreements. It is also noteworthy that the consolidated final accounts statement gives only details of calculations and not any new basis therefor. The basis of calculation, as explained earlier, had remained the same over the years and was well-known to all concerned.

7.2. In the light of what has been stated above, it cannot reasonably be alleged that there has been miscarriage of justice in this case. It has been the Authority's stated position that it will function with transparency, impartiality, and objectivity. That being so, the Authority will like to endorse the plea of M/s. MJR Steels that 'the mere fact of a substantial implication for a Port Trust shall not bar a petition seeking justice'. There has been no injustice in this case.

And, there are no extraordinary circumstances governing this case to warrant retrospective alteration of well-established practices and duly notified rates.

8.1. In the backdrop of the analysis given above, with reference to the totality of information collected during the processing of this case, and based on a collective application of mind, the Authority rejects the representation of the Applicant-Firm (M/s. Shruti Steels Limited).

8.2. A copy of this Order shall be submitted to the Hon'ble High Court of Calcutta by way of reporting compliance of its direction to this Authority.

8.3. Since it has not been possible for us to conclude these proceedings even within the extended time limit allowed by the High Court, while reporting compliance, the Hon'ble High Court may be requested to condone the delay. It is relevant here to point out that the delay was not on account of any casualness on our part but, on account of time taken by the two parties to give their responses.

9. In the light of the basic soundness of the pricing system adopted in this matter, it does not appear to be necessary for this Authority to take any further action *suo motu* to rationalise tariff setting for ship-breaking operations. This subject can be taken up for further consideration, if necessary, if and when any proposal/representation is received for a change in the system on a prospective basis.

S SATHYAM, Chairman

[Adv't /III/IV/Ext'y /143/99]

